जगन्नाथ व्रत कथा

एक बार भगवान श्रीकृष्ण सो रहे थे। निद्रावस्था में उनके मुख से अचानक निकला- "राधे" पटरानियों ने इसे सुना सहज स्त्रीभाव से वे सोचने लगीं कि हम प्रभु की इतनी सेवा करती हैं परंतु उन्हें ज्यादा राधाजी का ही स्मरण रहता है।

राधाजी के साथ प्रभु के प्रेम का रिश्ता कैसा था। यह अनुराग किस प्रकार का था? प्रभु ने उनके प्रति प्रेम का प्रदर्शन कैसे किया? स्वयं राधाजी भगवान के प्रति प्रेमभाव आखिर कैसे दिखाती थीं? रुक्मिणीजी एवं अन्य रानियों के मन में ये सब प्रश्न उठने लगे। पर उनकी जिज्ञासा शांत करे कौन?

बहुओं को सास और ननद की याद आई। सभी रोहिणीजी के पास पहुंची। उनसे राधारानी-श्रीकृष्ण के प्रेम व भगवान की ब्रज की लीलाएं सुनाने की प्रार्थना की।

बहुओं की जिद पर माता ने कथा सुनाने की हामी तो भर दी पर एक शर्त रखी। रोहिणीजी ने कहा- सुनाउंगी तो सही पर श्रीकृष्ण या बलराम को इसकी भनक न मिले इसका प्रबंध करो। यदि उन दोनों ने कथा सुन ली तो वे फिर से व्रज चले जाएंगे। तुमसब मिलकर भी उन्हें रोक न पाओगी। फिर द्वारकापुरी कौन संभालेगा?

तय हुआ कि सभी रानियों रोहिणीजी के साथ एक गुप्त स्थान पर जाएंगी। वहां पर सारी श्रीकृष्ण लीला कथा कही-सुनी जाएगी। माता के शर्त अनुसार वहां कोई और न आए इसके लिए सुभद्राजी पहरा देंगी। भाभियों ने ननद को मनुहार करके इसके लिए मना लिया।

सुभद्राजी को आदेश हुआ कि स्वयं श्रीकृष्ण या बलराम भी आएं तो उन्हें भी अंदर न आने देना। माता ने कथा सुनानी आरम्भ की। सुभद्रा द्वार पर तैनात थी।

"राधाकृष्ण के प्रेम की अनूठी कथा"

माता रोहिणी ने भगवान की शैशव लीला का बखान शुरू किया। भगवान नवजात शिशु के रूप में कैसे लगते थे। किस प्रकार से सोते थे। कैसे बालसुलभ हठ करते थे। रोहिणीजी इतने भाव से सुना रही थीं जैसे कथा नहीं है सबकुछ उसी समय चल रहा है।

कथा सुनकर सुभद्राजी भी स्वयं को बालरूप में अनुभव करने लगीं। वह किसी नवजात शिशु के जैसी वहीं द्वारपर पड़ गईं। उन्हें कुछ होश ही न था।

थोड़ी देर में श्रीकृष्ण एवं बलराम वहां आ पहुंचे। सुभद्राजी को द्वार पर ऐसे देखा तो कुछ संदेह हुआ। बाहर से ही अपनी सूक्ष्मशक्ति द्वारा माता द्वारा वर्णित ब्रजलीलाएं आनंद लेकर सुनने लगे। बलरामजी भी कथा का आनंद लेने लगे।

पटरानियां तो डूबी ही थीं भगवान भी विभोर होकर सुध-बुध खो बैठे। ऐसे विभोर हुए कि मूर्ति के समान जड़ प्रतीत होने लगे। बड़े ध्यानपूर्वक देखने पर भी उनके हाथ-पैर दिखाई नहीं देते थे। सुदर्शन ने भी द्रवित होकर लंबा रूप धारण कर लिया।

तभी अचानक देवर्षि नारद का वहां प्रवेश हो गया। देवमुनि नारद भी भगवान के इस रूप को देखकर आश्चर्यचकित हो निहारते रहे। कोई सुध में ही न था।

कुछ समय बाद नारद की तंद्रा भंग हुई। प्रणाम करके भगवान से कहा- प्रभु! मेरी इच्छा है मैंने आज जो रूप देखा है, वह आपके भक्तजनों को पृथ्वीलोक पर चिरकाल तक देखने को मिले। आप इस रूप में पृथ्वी पर वास करें।

भगवान, नारदजी की बात से प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा- "तथास्तु"। कलिकाल में मैं इसी रूप में नीलांचल क्षेत्र में अपना स्वरूप प्रकट करुंगा। आपने जिस बालभाव वाले रूप में अंगहीन मुझे देखा है, मेरा वही विग्रह प्रकट होगा। आपको धैर्यपूर्वक उसकी प्रतीक्षा करनी होगी।

भगवान ने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली यह बात सुनकर नारद गदगद हो गए। उन्होंने भगवान से पूछा- वह भाग्यशाली कौन होगा जिसे यह सुवअसर मिलेगा। आपतो जानते ही हैं मेरी कमजोरी है मेरा कौतूहल। इस बात को यदि न जान जाऊं तो मैं व्याकुल रहूंगा। प्रभु क्या मैं कलिकाल के आने तक व्याकुल रहूं?

भगवान नारद की चतुराई पर हंस पड़े। भगवान बोले- आपको इस दुर्लभ स्वरूप के पुनःदर्शन के लिए प्रतीक्षा तो करनी ही पड़ेगी देवर्षि। मालवराज इंद्रद्युम्न समुद्र के उत्तर दिशा और महानदी के दक्षिणदिशा में श्रीक्षेत्र में भव्य मंदिर का निर्माण कराएंगे। वहां मेरी प्रतिमा धातु या पाषाण की न होकर स्वयं कल्पवृक्ष से होगी। वहां मेरा स्वरूप वही होगा जो आपने देखने की लालसा प्रकट की।

नारदजी का कौतूहल शांत हो गया। वह प्रसन्न होकर भगवान की स्तुति करके अपने लोक को चले गए। श्रीक्षेत्र यानी श्रीजगन्नाथपुरी क्षेत्र में इंद्रद्युम्न द्वारा भगवान जगन्नाथ मंदिर की स्थापना की कथा यहीं से आरभ होती है। भगवान नीलमाधव के इस पुरुषोत्तम क्षेत्र पर सुदूर मालव में राज करने वाले इंद्रद्युम्न कैसे पहुंचे। कैसे हुई मंदिर की स्थापना। क्यों कहा जाता है इसे पुरुषोत्तम क्षेत्र।

बहुत सरस कथा आती है राजर्षि राजा इंद्रद्युम्न की। विभोर करने वाली कथा स्कंदपुराण में भी आती है। कथा को आगे बढ़ाने से पहले मैं आपको श्रीक्षेत्र के बारे में बताउंगा। आखिर भगवान ने इसी क्षेत्र को क्यों चुना? इस क्षेत्र की इतनी महिमा क्यों है? यह कथा स्वयं लक्ष्मीजी ने बताई है।

इंद्रद्युम्न एक बार ऋषियों की सभा में पहुंचे। राजा ने ऋषियों विद्वानों से पूछा- सर्वश्रेष्ठ विद्वतजनों से भरी सभा में मैं एक जिज्ञासा रखना चाहता हूं। ऋषियों आपने समस्त तीर्थों का सेवन किया है। मुझे कोई ऐसा तीर्थ बताइए जिसके सेवन से बड़े-से-बड़ा पापी भी निष्कलंक हो जाता है। जिसके दर्शन से संचित पुण्यों का नाश नहीं होता।

जिस क्षेत्र में प्रवेशमात्र से ही हृदय में नारायण का वास हो जाता है। मेरी वहां जाने की लालसा है। राजा के प्रश्न से उस सभा में शांति छा गई। कोई एकस्थान के बारे में ऐसा निर्णय नहीं कर पाया।

एक वृद्ध संत उठ खड़े हुए और बोले- राजन आप श्रीक्षेत्र चाहिए। वहां भगवान नारायण का साक्षात वास है। स्वयं ब्रह्माजी और समस्त देवता प्रतिदिन नारायण के दर्शन को वहां आते हैं। वहां रोहिणी कुंड के पास एक कल्पवृक्ष है। उस सरोवर में भूल से भी स्नान कर लेने वाला भगवान श्रीकृष्ण का सायुज्य प्राप्त कर लेता है।

"प्रेत योनि, भूल से भी न करें ये पांच पाप हो जाएंगे प्रेत"

राजा और वहां उपस्थिति सभी विद्वान यह सुनकर आश्चर्य में थे। संत ने कथा आगे बढ़ाई।

एक बार एक कौवे को जलक्रीड़ा की सूझी। वह मस्ती में डूबकर रोहिणी कुंड के पास पहुंचा और कुंड के जल में एक डुबकी लगाई। जल का स्पर्श करने के सात ही चमत्कार हुआ। नीच योनि वाला वह पशु तत्काल पवित्र हो गया। उसे श्रीकृष्ण का सायुज्य प्राप्त हो गया। वह श्रीकृष्ण के समान दिखने वाला और पवित्र हो गया।

हे परमनारायण भक्त इंद्रद्युम्न आप उस पुरुषोत्तम क्षेत्र में जाइए। वहां भगवान के नीलकंठ स्वरूप का दर्शन करें। वहां आपको एक साथ समस्त देवताओं के दर्शन हो जाएंगे। देवतागण अपने-अपने लोक से प्रतिदिन भगवान के लिए सुंदर पुष्प एवं भोग अर्पण करते हैं। आप उस दिव्यभूमि में अवश्य जाएं।

उस ऋषि ने श्रीक्षेत्र की महिमा का इतना वर्णन किया कि राजा व्याकुल हो गया दर्शन को। उसके मन में बस भगवान नीलमाधव के उस छवि के दर्शन की उत्कंठा रहने लगी। राजा का किसी काम में मन न लगता। वह भगवान के मंदिर में पहुंचा और उसके करूण प्रार्थना की।

हे नारायण यदि मैं आपका सच्चा भक्त हूं, यदि मैंने निष्ठापूर्वक प्रजापालन किया है यदि मैं धर्म पर पक्का हूं तो आप मुझे दर्शन दिया। प्रभु उन महात्मा द्वारा सुने आपके रूप के दर्शन के बिना यह जीवन व्यर्थ लगता है। यदि आप मुझे दर्शन न देंगे तो मैं प्राण त्याग दूंगा। भगवान के सामने करूण प्रार्थना करते, आंसू बहाते राजा इंद्रद्युम्न अचेत हो गए। वह गहरी निद्रा में चले गए। राजा ने एक सपना देखा। सपने में उन्हें एक देववाणी सुनाई पड़ी- तुम्हें विशेष कार्य के लिए चुना गया है। तुम निराशा का भाव त्याग दो। भगवान नीलमाधव के जिस विग्रह दर्शन के लिए तुम इतने व्यग्र हो, उसकी खोज करो। तुम अपनी ओर से प्रयास करो, तुम्हें देवों की सहायता प्राप्त होती रहेगी।

तुम एक भव्य मंदिर का निर्माण कराओ। उसके लिए उपयुक्त विग्रह की प्राप्ति भी तुम्हें समय आने पर हो जाएगी।
यह स्वप्न सुनकर राजा अचानक हड़बड़ाकर उठ बैठा। वह भागकर अपनी राजसभा में गया।

राजा ने अपने मंत्रियों, पुरोहितों को सारा स्वप्न कह सुनाया। राजपुरोहित के सुझाव पर शुभमुहूर्त में पूर्वी समुद्रतट पर एक विशाल मंदिर के निर्माण का निश्चय हुआ।

वैदिक-मंत्रोचार के साथ मंदिर निर्माण का श्रीगणेश हुआ। राजा इंद्रद्युम्न के मंदिर बनवाने की सूचना शिल्पियों और कारीगरों को हुई। सभी इसमें योगदान देने पहुंचे। दिन रात मंदिर के निर्माण में जुट गए। कुछ ही वर्षों में मंदिर बनकर तैयार हुआ।

सागरतट पर विशाल मंदिर का निर्माण तो हो गया परंतु भगवान की मूर्ति की समस्या जस की तस थी। राजा फिर से चिंतित होने लगे। एक दिन मंदिर के गर्भगृह में बैठकर इसी चिंतन में बैठे राजा की आंखों से आंसू निकल आए।

"भगवान जगन्नाथ बीमार क्यों पड़े? जगन्नाथधाम के विचित्र पौराणिक रहस्य"

राजा ने भगवान से विनती की- प्रभु आपके किस स्वरूप को इस मंदिर में स्थापित करूं इसकी चिंता से व्यग्र हूं। मार्ग दिखाइए। आपने स्वप्न में जो संकेत दिया था उसे पूरा होने का समय कब आएगा? देवविग्रह विहीन मंदिर देख सभी मुझ पर हंसेंगे।

राजा की आंखों से आंसू झर रहे थे और वह प्रभु से प्रार्थना करते जा रहे थे- प्रभु आपके आशीर्वाद से मेरा बड़ा सम्मान है। प्रजा समझेगी कि मैंने झूठ-मूठ में स्वप्न में आपके आदेश की बात कहकर इतना बड़ा श्रम कराया। हे प्रभु मार्ग दिखाइए।

राजा दुखी मन से अपने महल में चले गए। उस रात को राजा ने फिर एक सपना देखा।

सपने में उसे देववाणी सुनाई दी- राजन! यहां निकट में ही भगवान श्रीकृष्ण का विग्रहरूप है। उस विग्रह के तुम्हारे द्वारा बनाए मंदिर में स्थापना ही विधि का विधान है। वह होकर रहेगा। उस दिव्य विग्रह को खोजने का प्रयास करो, तुम्हें दर्शन मिलेंगे।

इंद्रद्युम्न ने स्वप्न की बात पुनः पुरोहित और मंत्रियों को बताई। सभी यह निष्कर्ष पर पहुंचे कि प्रभु की कृपा सहज प्राप्त नहीं होगी। उसके लिए हमें निर्मल मन से परिश्रम आरंभ करना होगा।

भगवान का विग्रह कहां है, इसका पता लगाने की जिम्मेदारी इंद्रद्युमन ने चार विद्वान पंडितों को सौंप दिया। प्रभु इच्छा से प्रेरित चारों विद्वान चार दिशाओं में निकले। उन चारों में एक थे विद्यापति।

चारों विद्वानों में सबसे कम उम्र के थे विद्यापति। सभी प्रभु के विग्रह की खोज को चल पड़े। पंडित विद्यापति पूर्व दिशा की ओर चले। कुछ आगे चलने के बाद विद्यापति उत्तर की ओर मुड़े तो उन्हें एक जंगल दिखाई दिया। वन भयावह था।

विद्यापति श्रीकृष्ण के उपासक थे। उन्होंने श्रीकृष्ण का स्मरण किया और राह दिखाने की प्रार्थना की। भगवान श्रीकृष्ण की प्रेरणा से उन्हें राह दिखने लगी। प्रभु का नाम लेते वह वन में चले जा रहे थे। जंगल के मध्य उन्हें एक पर्वत दिखाई दिया। पर्वत के वृक्षों से संगीत की ध्वनि सा सुरम्य गीत सुनाई पड़ रहा था।

विद्यापति संगीत के जानकार थे। उन्हें वहां मृदंग, बंसी और करताल की मिश्रित ध्वनि सुनाई दे रही थी।

यह संगीत उन्हें दिव्य लगा। यह संगीत तो सामान्य मानवों द्वारा हो ही नहीं सकता। ये वाद्य या तो गंधर्व बजा रहे हैं या स्वयं देवता। संभवतः मैं सही जगह आ पहुंचा हूं। उस ऋषि ने बताया था कि भगवान के विग्रह की पूजा करने से पूर्व देवता गीत-संगीत से उन्हें प्रसन्न करते हैं।

विद्यापति को तो जैसे पंख लग गए। वह संगीत की लहरियों को खोजते विद्यापति आगे बढ़ चले। वह जल्दी ही पहाड़ी की चोटी पर पहुंच गए। पहाड़ के दूसरी ओर उन्हें एक सुंदर घाटी दिखी जहां भील नृत्य कर रहे थे।

विद्यापति उस दृश्य को देखकर मंत्रमुग्ध थे। सफर के कारण थके थे पर संगीत से थकान मिट गयी। उन्हें नींद आने लगी। तभी वहां एक बड़ी विचित्र बात हो गई।

"भगत के वश में हैं भगवान सदना जी की विभोर करने वाली कथा"

अचानक एक बाघ की गर्जना सुनकर विद्यापति घबरा उठे। बाघ उनकी और दौड़ता आ रहा था। बाघ को देखकर विद्यापति घबरा गए और बेहोश होकर वहीं गिर पडे। बाघ विद्यापति पर आक्रमण करने ही वाला था कि तभी एक स्त्री ने बाघ को पुकारा। "बाघा! ओ बाघा! रूक जा!"

उस आवाज को सुनकर बाघ मौन खड़ा हो गया। स्त्री ने उसे लौटने का आदेश दिया तो बाघ लौट पड़ा। बाघ स्त्री के पैरों के पास ऐसे लोटने लगा जैसे कोई बिल्ली पुचकार सुनकर खेलने लगती है।

युवती बाघ की पीठ को प्यार से थपथपाने लगी, बाघ स्नेह से लोटता रहा। वह स्त्री वहां मौजूद स्त्रियों में सर्वाधिक सुंदर थी। वह भीलों के राजा विश्वावसु की इकलौती पुत्री थी-ललिता।

ललिता ने अपनी सेविकाओं को अचेत विद्यापति की देखभाल के लिए भेजा। सेविकाओं ने झरने से जललेकर विद्यापति पर छिड़का।

कुछ देर बाद विद्यापति की चेतना लौटी। उन्हें जल पिलाया गया। विद्यापति यह सब देखकर कुछ आश्चर्य में थे। ललिता विद्यापति के पास आई और पूछा- आप कौन हैं? भयानक जानवरों से भरे इस वन में आप कैसे पहुंचे? आपके आने का प्रयोजन बताइए ताकि मैं आपकी सहायता कर सकूं।

विद्यापति के मन से बाघ का भय पूरी तरह गया नहीं था। ललिता ने यह बात भांप ली। सांत्वना देते हुए बोली- विप्रवर आप मेरे साथ चलें। जब आप स्वस्थ हों तब अपने लक्ष्य की ओर प्रस्थान करें।

विद्यापति ललिता के पीछे-पीछे उनकी बस्ती की तरफ चल दिए। विद्यापति भीलों के पाजा विश्वावसु से मिले। विश्वावसु को उसने अपना पूरा परिचय नहीं दिया। बस यह कहा कि वह श्रीकृष्ण के भक्त हैं। वह भ्रमण करके लोगों को भगवान के विषय में ज्ञान देते हैं। उनकी शंका का समाधान करते हैं।

विद्यापति ने अपना वास्तविक परिचय तब तक छुपाना उचित समझा जब तक कि वह अपने लक्ष्य तक न पहुंच जाए। विश्वावसु, विद्यापति जैसे विद्वान से मिलकर बड़े प्रसन्न हुए।

विश्वावसु के अनुरोध पर विद्यापति कुछ दिन वहां अतिथि बनकर रूके। वह भीलों को धर्म और ज्ञान का उपदेश देने लगे। उनके उपदेशों को विश्वावसु तथा ललिता बड़ी रूचि के साथ सुनते थे। ललिता के मन में विद्यापति के लिए अनुराग पैदा हो गया।

विद्यापति ने भी भांप लिया कि ललिता को उनसे प्रेम हो गया है किंतु विद्यापति एक बड़े कार्य के लिए निकले थे। वह जिस कार्य के लिए निकले थे उसका बस एक संकेत मिला था- संगीत के रूप में। परंतु उससे आगे अभी तक कुछ नहीं हुआ, वह प्रेम कर ही नहीं सकते।

ईश्वर को तो अपनी लीला पूरी करनी थी। अचानक एक दिन विद्यापति बीमार हो गए। बीमार क्या मरणासन्न। ऐसा लगा कि अब गए कि तब गए। ललिता ने उनकी सेवा-सुश्रुषा की। उसका लाभ हुआ और विद्यापति स्वस्थ भी हो गए। इससे विद्यापति के मन में भी ललिता के प्रति प्रेम भाव पैदा हो गया।

भील राजकुमारी को बाहर से आए ब्राह्मण से प्रेम हुआ तो यह पिता से छुप न सका। उन्हें अपनी प्रतिष्ठा की चिंता हुई। फिर सोचा यदि यह विद्वान विवाह करके यहीं बस जाए तो सारे भीलों को लाभ होगा। विश्वावसु ने विद्यापति के सामने ललिता से विवाह का प्रस्ताव रखा।

विद्यापति ने इसे स्वीकार कर लिया। दोनों का विवाह हुआ। कुछ दिन दोनों के सुखमय बीते। दांपत्य जीवन से विद्यापति प्रसन्न तो थे पर एक चिंता उन्हें सताती रहती। मुझे राजा ने जिस कार्य के लिए भेजा है वह अधूरा है। पर सूझता ही न था कि आगे क्या करें।

इस बीच विद्यापति को एक विशेष बात पता चली। विश्वावसु एक पहर रात बाकी रहती तभी उठकर कहीं चला जाता। सूर्योदय के बाद ही लौटता था। कितनी भी विकट स्थिति आए उसका यह नियम कभी नहीं टूटता था। ऐसा वह न जाने कब से करता आया था।

भीलराजा विश्वावसु के इस व्रत पर विद्यापति को आश्चर्य हुआ। उनके मन में इस रहस्य को जानने की इच्छा हुई, आखिर विश्वावसु जाता कहां है। कहीं इसका संबंध उस अभियान से तो नहीं जिसके लिए मैं यहां आ पहुंचा हूं। कहीं ईश्वर मुझे संकेत तो नहीं दे रहे। यह सोचकर विद्यापति परेशान थे।

ललिता ने परेशान देखा तो कारण पूछ लिया। विद्यापति ने ललिता से पूछा- विश्वावसु प्रतिदिन कहां जाते हैं? विकट से विकट परिस्थिति में भी उनका नियम नहीं टूटता ऐसा क्यों? मुझे यह जानने की बड़ी तीव्र इच्छा है। यही सोचकर मैं परेशान हूं।

"समस्या निदान करने वाला अचूक मंत्र"

ललिता के सामने धर्मसंकट आ गया। वह पति की बात को ठुकरा नहीं सकती थी लेकिन पति जो पूछ रहा था उसे बता नहीं सकती थी। यह उसके वंश की गोपनीय परंपरा से जुड़ी बात थी जिसे खोलना संभव नहीं था।

ललिता ने कहा- स्वामी! यह हमारे कुल का रहस्य है जिसे किसी के सामने खोला नहीं जा सकता। आप मेरे पति हैं, मैं आपको कुल का पुरुष मानते हुए जितना संभव है बताऊंगी।

यहां से कुछ दूरी पर एक गुफा है जिसके अन्दर हमारे कुलदेवता हैं। उनकी पूजा हमारे सभी पूर्वज करते आए हैं। यह पूजा निर्बाध चलनी चाहिए। उसी पूजा के लिए पिताजी रोज सुबह नियमित रूप से जाते हैं। विद्यापति ने ललिता से कहा- तुमने मुझे कुल का पुरुष माना तो क्या मैं कुलदेवता का दर्शन नहीं कर सकता? मेरी बड़ी इच्छा है दर्शन की। तुम इसे पूरी करो।

ललिता बोली- यह संभव ही नहीं। हमारे कुलदेवता के बारे में किसी को जानने की इच्छा है, यह सुनकर मेरे पिता क्रोधित हो जाएंगे।
विद्यापति ने कहा- देवता के दर्शन से किसी को रोकना तो घोर पाप है। तुम्हारे पिता ऐसा पाप कैसे करेंगे? मैं धर्मनिष्ठ व्यक्ति हूं। धर्म का पालन करता हूं। इसलिए देवता के दर्शन का तो मेरा अधिकार है। मुझे इस अधिकार से न वंचित करो प्रिये।

"जीवन में एक बार गिरिराज गोवर्धन स्पर्श क्यों जरूरी है?"

ललिता तर्क से सहमत थी पर एक बात ऐसी थी जिससे वह विवश थी। वह विद्यापति को यह बात स्वयं नहीं बताना चाहती थी। उसने एक निर्णय किया।

विद्यापति की उत्सुक्ता बढ़ रही थी। वह तरह-तरह से ललिता के अपने प्रेम की शपथ देकर उसे मनाने लगे। उसने पतिव्रत धर्म निभाने की शपथ दिलाई। ललिता से कहा कि जो स्त्री पति की इच्छा नहीं पूरी करती वह मोक्ष नहीं पाती। उसका पति भी प्रेत बनकर भटकता रहता है। उसके कुल का उद्धार नहीं होता।

ललिता ने हारकर कहा कि अपने पिताजी से विनती करेगी कि वह आपको दर्शन करा दें। ललिता ने पिता को सारी बात बताई तो वह क्रोधित हो गए।

ललिता ने विश्वावसु से कहा- मैं आपकी अकेली संतान हूं। आपके बाद देवता के पूजा का दायित्व मेरा होगा। इसलिए मेरे पति का यह अधिकार बनता है क्योंकि आगे उसे ही पूजना होगा। आप पुत्र और पुत्री में भेद नहीं कर सकते। जामाता को पुत्र समझें और उसे उसका अधिकार दें। विश्वावसु इस तर्क के आगे झुक गए।

वह बोले- गुफा के दर्शन किसी को तभी कराए जा सकते हैं जब वह भगवान की पूजा का दायित्व अपने हाथ में ले ले। तुम भली-भांति जानती हो कि मैं विद्यापति को वहां क्यों नहीं जाने देना चाहता।

ललिता बोली- मैं जानती हूं पर विद्यापति अब कोई यात्री नहीं। वह हमारे परिवार का सदस्य हैं। वह यहीं के वासी हो चुके हैं। इसलिए उनके दर्शन करने से देवता का संकट नहीं आएगा। हमारे कुलदेवता लुप्त नहीं होंगे।

विद्यापति छुपकर पिता-पुत्री के बीच की बात सुन रहे थे। देवता लुप्त हो जाएंगे, यह सुनकर वह अपना कौतूहल रोक न सके। सामने आ गए देवता के लुप्त होने का क्या रहस्य है यह पूछा। विश्वावसु ने जब जाना कि विद्यापति ने उसके देवता का रहस्य सुन लिया है तो उनका हृदय धक कर गया।

“ऐसे उतारें नजर, नजर दोष से बचाते हैं ये सरल उपाय”

विद्यापति ने अपने ससुर को विश्वास दिलाया कि वह दायित्व को पूरा करेगा। इसके लिए वह ईश्वर की सौगंध लेने को तैयार है तो विश्वावसु ने वह रहस्य बताना शुरू किया।विश्वावसु बोले- यहां देवताओं का प्रतिदिन आगमन होता है। वे अपने साथ विविध प्रकार के नैवेद्य, फल-फूल आदि लेकर आते हैं। वे हमारे कुलदेवता की पूजा करने आते हैं। उनके पूजन में किसी तरह का विघ्न न हो इसके लिए उन्होंने चारों तरफ पहाड़ और वन बना दिए हैं।

कोई विघ्न न डाले इसके लिए वन में हिंसक जंतु हैं। इसी कारण तुम्हें इस क्षेत्र में अनुपम सुगंध, अनुपम फल-पुष्प प्राप्त होते हैं जो कहीं और नहीं होते। यक्ष आदि देवता के लिए गीत गाते हैं। उनके पूजन करने के जाने के उपरांत मैं पृथ्वीवासियों की ओर से उनकी पूजा करता हूं। उनकी कृपा से ही हम सभी प्रकार के संकटों से मुक्त हैं। हमारे देवता की प्रतिमा ऐसी मनोहर है कि जो उसे देखता है देखता ही रह जाता है। एक रहस्यमयी प्रतिमा है जिसमें बहुत आकर्षण है। सबके लिए उसे देखना भी संभव नहीं। जो देख ले वही उसे अपने साथ लिए जाना चाहेगा।

एक बार हमारे पूर्वजों को शंका हुई कि कहीं कोई हमारे देवता की प्रतिमा लेकर तो नहीं चला जाएगा। उन्होंने यह शंका स्वर्गलोक से आने वाले देवताओं के सामने रखी। देवताओं ने बताया कि कलिकाल में एक राजा इसे यहां से ले जाकर कहीं और प्रतिष्ठित कर देगा। कहीं देवता के प्रस्थान के साथ ही हमारा दुर्भाग्य न आ जाए इसीलिए किसी को भी दर्शन नहीं करने दिया जाता।

तुम बाहर से आए हो। इसलिए तुम्हें दर्शन से रोक रहा था। पर तुमने शपथ ली है तो मुझे थोड़ा भरोसा हुआ है। मैं तुम्हें दर्शन को लेकर तो जाउंगा पर अभी वह मार्ग नहीं बताउंगा। मेरे जीवनकाल तक पूजा का दायित्व मेरा है। मेरे उपरांत तुम पूजन करोगे। पुत्री की जिद के कारण मैं तुम्हें कल आँखों पर पट्टी बांधकर ले चलने को तैयार हूं।

"शिवलिंग या शिव की मूर्ति, पूजा के लिए कौन है श्रेष्ठ?"

विद्यापति के मन में अब कोई संदेह ही न रहा कि यह वही प्रतिमा है जिसे खोजने वह निकले हैं। उनका लक्ष्य पूरा होने को था। विद्यापति केवल दर्शन करने तो आए नहीं थे। उन्हें मूर्ति लेकर जानी थी। इसलिए उन्होंने एक चाल चली।

दूसरे दिन सूर्योदय से पूर्व विद्यापति की आंखों पर पट्टी बांधकर विश्वावसु उनका दायां हाथ पकड़कर चले। विद्यापति ने बाईं मुट्ठी में सरसों रख लिया था। रास्ते में वह सरसों छोड़ते हुए गए। काफी देर चलने के बाद विश्वावसु रूके।

विश्वावसु ने विद्यापति के आँखों की काली पट्टी खोल दी। वे एक गुफा के सामने थे। उस गुफा में नीले रंग का प्रकाश चमक उठा। हाथों में मुरली लिए भगवान श्रीकृष्ण का रूप विद्यापति को दिखाई दिया। विद्यापति आनंदमग्न हो गए। उन्होंने भगवान के दर्शन किए, स्तुति की। दर्शन के बाद तो जैसे विद्यापति जाना ही नहीं चाहते थे। विश्वावसु ने लौटने का आदेश दिया तो विवश होकर उठे। फिर उनकी आंखों पर पट्टी बांधी और दोनों लौट पड़े।

लौटने पर ललिता ने विद्यापति से पूछा- क्या आपके प्रदेश में भी हमारे कुलदेवता जैसी प्रतिमा है? क्या आपने ऐसा विग्रह कहीं और देखा है? आप उन्हें किस नाम से जानते हैं, कैसे पूजते हैं?
ललिता ने प्रश्नों की झड़ी लगा दी पर विद्यापति चुप रहे।

"कुँआरी क्यों हैं माता वैष्णो देवी?"

गुफा में दिखे अलौकिक दृश्य के बारे में पत्नी को बताना उचित नहीं समझा। विश्वावसु के कुलदेवता ही नीलमाधव भगवान हैं, अब यह पक्का हो चुका था। महाराज ने स्वप्न में जिस प्रभु विग्रह के बारे में देववाणी सुनी थी, वह यही भगवान नीलमाधव हैं। किसी तरह इसी विग्रह को लेकर राजधानी पहुंचना होगा।

विद्यापति गुफा से मूर्ति लेकर जाने की सोच तो रहे थे, पर भीलराज से विश्वासघात के विचार से मन व्यथित भी था। विद्यापति धर्म-अधर्म के बारे में सोचते रहे। फिर विचार आया, यदि विश्वावसु ने सचमुच विश्वास किया होता तो आंखों पर पट्टी बांधकर गुफा तक नहीं ले जाते। इसलिए उनके साथ विश्वासघात का प्रश्न नहीं उठता। विद्यापति ने गुफा से मूर्ति चुराने का निश्चय कर ही लिया।

"करना है उद्धार तो मारो जूते चार"

विद्यापति ने ललिता से कहा कि वह अपने माता-पिता के दर्शन के लिए जाना चाहता है। वे उसे लेकर परेशान होंगे। ललिता भी साथ चलने को तैयार हुई। विद्यापति ने यह कहकर समझा लिया कि वह शीघ्र ही लौटेगा तो उसे लेकर जाएगा।

ललिता मान गई। विश्वावसु ने उसके लिए घोड़े का प्रबंध किया। अब तक सरसों के दाने से पौधे निकल आए थे। उनको देखता विद्यापति गुफा तक पहुंच गए। भगवान की स्तुति की और क्षमा प्रार्थना के बाद मूर्ति उठाकर झोले में रख ली।

लंबे सफर के बाद वह राजधानी पहुंच गए और सीधे राजा के पास गए। दिव्य प्रतिमा राजा को सौंप दी और पूरी कहानी सुनायी। राजा ने बताया कि उसने कल एक सपना देखा कि सुबह सागर में एक लकड़ी का कुन्दा बहकर आएगा।

उस कुंदे की नक्काशी करवाकर भगवान की मूर्ति बनवा लेना जिसका अंश तुम्हें प्राप्त होने वाला है। वह भगवान श्रीविष्णु का स्वरूप होगा। तुम जिस मूर्ति को लाए हो वह भी भगवान विष्णु का अंश है। दोनों आश्वस्त थे कि उनकी तलाश पूरी हो गई है।

राजा ने कहा- जब भगवान द्वारा भेजी लकड़ी से हम इस प्रतिमा का बड़ा स्वरूप बनवा लेंगे तब तुम अपने ससुर से मिलकर उन्हें मूर्ति वापस कर देना। उनके कुलदेवता का विशाल विग्रह एक भव्य मंदिर में स्थापित देखकर उन्हें खुशी ही होगी।

दूसरे दिन सूर्योदय से पूर्व इंद्रद्युम्न विद्यापति तथा मंत्रियों को लेकर सागरतट पर पहुंचे। स्वप्न के अनुसार एक बड़ा कुंदा पानी में बहकर आ रहा था। सभी उसे देखकर प्रसन्न हुए। दस नावों पर बैठकर राजा के सेवक उस कुंदे को खींचने पहुंचे।

"इन संकेतों से जानें आसपास भूत प्रेत आत्मा का वास तो नहीं"

मोटी-मोटी रस्सियों से कुंदे को बांधकर खींचा जाने लगा लेकिन कुंदा टस से मस न हुआ। और लोग भेजे गए। सैकड़ों लोग और नावों का प्रयोग करके भी कुंदे को हिलाया तक नहीं जा सका।
राजा का मन उदास हो गया। सेनापति ने एक लंबी सेना कुंदे को खींचने के लिए भेज दी।

सारे सागर में सैनिक ही सैनिक नजर आने लगे लेकिन सभी मिलकर कुंदे को अपने स्थान से हिला तक न सके। सुबह से रात हो गई।
अचानक राजा ने काम रोकने का आदेश दिया। उसने विद्यापति को अकेले में ले जाकर कहा कि वह समस्या का कारण जान गया है। राजा के चेहरे पर संतोष के भाव थे। राजा ने विद्यापति को गोपनीय रूप से कहीं चलने की बात कही।

"बिगड़े काम बनाएंगे, धन बरसाएंगे ये पैसे के टोटके"

राजा इंद्रद्युम्न ने कहा कि अब भगवान का विग्रह बन जाएगा बस एक काम करना होगा। मुझे भगवान के संकेत मिल रहे हैं। इंद्रद्युम्न जान गए थे कि प्रभु के विग्रह के लिए आई लकड़ी का कुंदा हिल-डुल भी क्यों नहीं रहा।

राजा ने कहा- विद्यापति इस दिव्य मूर्ति की अब तक जो पूजा करता आया था उससे तुरंत भेंट करके क्षमा मांगनी होगी। बिना उसके स्पर्श किए यह कुंदा आगे नहीं बढ सकेगा।

राजा इंद्रद्युम्न और विद्यापति विश्वावसु से मिलने पहुंचे। राजा ने पर्वत की चोटी से जंगल को देखा तो उसकी सुंदरता को देखता ही रह गया। दोनों भीलों की बस्ती की ओर चुपचाप चलते रहे।

इधर विश्वावसु अपने नियमित दिनचर्या के हिसाब से गुफा में अपने कुलदेवता की पूजा के लिए चले। वहां प्रभु की मूर्ति गायब देखी तो वह समझ गए कि उनके दामाद ने ही यह छल किया है।

विश्वावसु लौटे और ललिता को सारी बात सुना दी। विश्वावसु पीड़ा से भरे घर के आंगन में पछाड़ खाकर गिर गए। ललिता अपने पति द्वारा किए विश्वासघात से दुखी थी। स्वयं को इसका कारण मान रही थी। पिता-पुत्री दिनभर विलाप करते रहे। दोनों अनहोनी की आशंका से चिंतित थे। अब भीलों का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। उनका कुल, उनके लोग नष्ट हो जाएंगे। दोनों यही कहते विलाप कर रहे थे।

"भरा रहेगा घर का अन्न धन भंडार, करें ये सरल उपाय"

सारा दिन विलाप करते निकल गया। दोनों विलाप करते बेसुध हो जाते। सुध आती तो फिर रोने लगते और बेहोश हो जाते। ऐसे ही एक दिन बीत गया।

अगली सुबह विश्वावसु उठे और सदा की तरह दिनचर्या का पालन करते हुए गुफा की तरफ बढ़ निकले। वह जानते थे कि प्रभु का विग्रह वहां नहीं है फिर भी उनके पैर गुफा की ओर खींचे चले जाते थे।

विश्वावसु के पीछे ललिता और रिश्तेदार भी चले। विश्वावसु गुफा के भीतर पहुंचे। जहां भगवान की मूर्ति होती थी उस चट्टान के पास हाथ जोड़कर खडे रहे। फिर उस ऊंची चट्टान पर गिर गए और बिलख–बिलखकर रोने लगे। उनके पीछे प्रजा भी रो रही थी।

"जन्मदिन या वार से चुटकियों में जानें किसी की जन्मकुंडली"

एक भील युवक भागता हुआ गुफा के पास आया। उसने बताया कि महाराज और उनके साथ विद्यापति बस्ती की ओर आ रहे हैं। यह सुनकर सब चौंक उठे। विश्वावसु राजा के स्वागत में गुफा से बाहर आए लेकिन उनकी आंखों में आंसू थे। राजा इंद्रद्युमन विश्वावसु के पास आए और उन्हें अपने हृदय से लगा लिया।

राजा बोले- भीलराज, तुम्हारे कुलदेवता की प्रतिमा का चोर तुम्हारा दामाद नहीं मैं हूं। उसने तो अपने महाराज के आदेश का पालन किया। यह सुनकर सब चौंक उठे।

विश्वावसु ने राजा को आसन दिया। राजा ने उस विश्वावसु को शुरू से अंत तक पूरी बात बताकर कहा कि आखिर क्यों यह सब करना पड़ा। फिर राजा ने उनसे अपने स्वप्न और फिर जगन्नाथपुरी में सागरतट पर मंदिर निर्माण की बात कह सुनाई।

राजा ने विश्वावसु से प्रार्थना की- भील सरदार विश्वावसु, कई पीढ़ियों से आपके वंश के लोग भगवान की मूर्ति को पूजते आए हैं। भगवान के उस विग्रह के दर्शन सभी को मिले इसके लिए आपकी सहायता चाहिए।

"इस कथा को सुनने से मिलता है मोक्ष"

ईश्वर द्वारा भेजे गए लकड़ी के कुंदे से बनी मूर्ति के भीतर हम इस दिव्य मूर्ति को सुरछित रखना चाहते हैं। अपने कुल की प्रतिमा को पुरी के मंदिर में स्थापित करने की अनुमति दो। उस कुंदे को तुम स्पर्श करोगे तभी वह हिलेगा।

विश्वावसु राजी हो गए। राजा सपरिवार विश्वावसु को लेकर सागरतट पर पहुंचे। विश्वावसु ने कुंदे को छुआ। छूते ही कुंदा अपने आप तैरता हुआ किनारे पर आ लगा। राजा के सेवकों ने उस कुंदे को राजमहल में पहुंचा दिया। अगले दिन मूर्तिकारों और शिल्पियों को राजा ने बुलाकर मंत्रणा की कि आखिर इस कुंदे से कौन सी देवमूर्ति बनाना शुभदायक होगा। मूर्तिकारों ने कह दिया कि वे पत्थर की मूर्तियां बनाना तो जानते हैं लेकिन लकड़ी की मूर्ति बनाने का उन्हें ज्ञान नहीं।

एक नए विघ्न के पैदा होने से राजा फिर चिंतित हो गए। राजा पुनः भगवान का स्मरण करने लगे। भगवान ने प्रेरणा दी कि तुम इसकी चिंता छोड़ो। तुम्हारे पास एक योग्य शिल्पी पधारेंगे। वही इस विग्रह का निर्माण कर सकते हैं। वे नियम के बड़े पक्के हैं। तुम उन्हें मान लेना और अपना वचन मत भंग करना।

अगले दिन एक वृद्ध व्यक्ति राजसभा में आया और बोला- मैं जानता हूं कि कौन सी प्रतिमा स्थापित की जानी चाहिए। मैं वह प्रतिमा भी बनाउंगा। आप भगवान श्रीकृष्ण को उनके भाई बलभद्र तथा बहन सुभद्रा के साथ यहां विराजमान करें। इस दैवयोग का यही संकेत है।

राजा को उस बूढ़े व्यक्ति की बात से सांत्वना मिली। उसे भगवान का स्वप्न याद आया। परखने के लिए राजा ने पूछा कि आखिर मूर्ति बनेगी कैसे?

"दूसरों की ये वस्तुएं आपको चुपके से दरिद्र बनाती हैं"

उस वृद्ध ने कहा- मैं इस कला में कुशल हूं। मैं इस पवित्र कार्य को पूरा करूंगा और मूर्तियां बनाउंगा। पर मेरी एक शर्त है। मैं भगवान की मूर्ति निर्माण का काम एकांत में करूंगा। मैं यह काम बंद कमरे में करुंगा। कार्य पूरा करने के बाद मैं स्वयं दरवाजा खोलकर बाहर आऊंगा।

इस बीच कोई मुझे न बुलाए, न मेरे पास आए। यदि किसी ने बीच में बाधा की तो मैं काम अधूरा छोड़कर लुप्त हो जाऊंगा। जब तक निर्माणकार्य चले बाहर संगीत बजना चाहिए ताकि मेरे कार्य की सूचना किसी को न लगे। मेरे औजारों के चलने की आवाज महल के बाहर न जाए इसकी व्यवस्था कर दें।

राजा सहमत तो थे लेकिन उन्हें एक चिंता हुई। राजा बोले- यदि कोई आपके पास नहीं आएगा तो ऐसी हालत में आपके खाने पीने की व्यवस्था कैसे होगी? शिल्पी ने कहा- जब तक मेरा काम पूर्ण नहीं होता मैं कुछ खाता-पीता नहीं हूं।

राजमंदिर के एक विशाल कक्ष में उस बूढ़े शिल्पी ने स्वयं को 21 दिनों के लिए बंद कर लिया। बाहर वादक वाद्ययंत्र बजाने लगे तो मूर्ति निर्माण कार्य आरंभ हुआ। भीतर से औजारों के चलने की आवाजें आती थीं।

महारानी गुंडीचा देवी दरवाजे से कान लगाकर अक्सर छेनी-हथौड़े के चलने की आवाजें सुना करती थीं। महारानी रोज की तरह कमरे के दरवाजे से कान लगाए खड़ी थीं।

पंद्रह दिन बाद उन्हें कमरे से आवाज सुनायी पड़नी बंद हो गई। जब मूर्तिकार के काम करने की कोई आवाज न मिली तो रानी चिंतित हो गईं।

उन्हें लगा कि वृद्ध आदमी है, खाता-पीता भी नहीं कहीं उसके साथ कुछ अनिष्ट न हो गया हो। व्याकुल होकर रानी ने दरवाजे को धक्का देकर खोला और भीतर झांककर देखा।

महारानी गुंडीचा देवी ने इस तरह मूर्तिकार को दिया हुआ वचन भंग कर दिया था। मूर्तिकार अभी मूर्तियां बना रहा था परंतु रानी को देखते ही अदृश्य हो गए। मूर्ति निर्माण का कार्य अभी तक पूरा नहीं हुआ था। भगवान के हाथ-पैर अभी नहीं बन सके थे।

राजा और रानी दोनों विलाप करने लगे। उन्होंने अपना वचन भंग कर दिया था। ईश्वर ने उन्हें हृदय में प्रेरणा दी तुम व्यर्थ चिंतित हो रहे हो। जो शिल्पी आए थे वे स्वयं भगवान विश्वकर्मा थे।

जिन प्रतिमाओं को तुम अपूर्ण समझ रहे हो वास्तव में वैसी ही प्रतिमा स्थापित होनी थी। मैंने नारद को यह वरदान दिया था। नारद भी इतने समय से तुम्हारे बीच ही गोपनीय रूप में उपस्थित हैं। नारद तुम्हें दर्शन देकर सारा रहस्य बताएंगे। अब तुम ध्यान से वह विधि सुनो जिसे करके ही प्राण प्रतिष्ठा करना।

नीलांचल पर सौ कुएं बनवाओ। सौ यज्ञों का आयोजन करो। कुओं के जल से मेरा अभिषेक होगा। उसके बाद इसकी स्थापना स्वयं ब्रह्मदेव से करेंगे। वहां तुम्हें लेकर नारद जाएंगे।

"ऐसे जानें आप पर शनि का प्रकोप है या नहीं"

राजा ने नीलांचल पर्वत पर विशाल मंदिर का निर्माण कराया। ऐसा विशाल मंदिर उस समय भूलोक पर दूसरा न था। भगवान के बताए अनुसार नारदजी प्रकट हुए। भगवान की इच्छानुसार वह राजा इंद्रद्युम्न को लेकर ब्रह्मलोक की ओर चले।

राजा इंद्रद्युमन समय की गति से चलकर ब्रह्मलोक पहुंचे। ब्रह्माजी की स्तुति के बाद उन्हें भगवान की कही बातें बताई। ब्रह्माजी यह जानकर बड़े प्रसन्न हुए। सौभाग्य मानकर वह इसके लिए सहर्ष तैयार हो गए।

ब्रह्माजी ने कहा- तुम आगे चलो मैं पीछे से आऊंगा। एक बात का ध्यान रखना। जब तुम वापस जाओगे तब तक धरती पर बहुत कुछ बदल चुका होगा। तुम्हारी कई पीढियां बीत गईं हैं। हजारों वर्ष बीत चुके होंगे। अब तक 71 कल्प निकल गए। मनु भी बदल चुके हैं। इसलिए विस्मय में मत रहना।

ब्रह्माजी से विदा लेकर इंद्रद्युम्न नारद के साथ पृथ्वी पर आए। अब वहां राजा गाला का राज्य स्थापित हो चुका था। जो मंदिर विश्वावसु ने बनाया था उसका अधिकांश अंश लुप्त चुका है। इंद्रद्युम्न ने पूजा की तैयारी शुरू की।

राजा गाला को लगा कि कोई उसके राज्य में अतिक्रमण करने आया है। वह अपनी सेना लेकर चढ़ आया पर जब दृश्य देखा तो विनीत हो गया। कुओं से निकालकर 108 कलशों में जलभरकर भगवान के शिशुरूप का अभिषेक आरंभ हुआ।

भगवान ने नारदजी को वचन दिया था कि वह एक साधारण बालक की तरह अपनी लीलाएं करके उन्हें आनंदित करेंगे। इसलिए भगवान ने लीला आरंभ की। इतने स्नान से भगवान को सर्दी लग गई। भगवान का पंद्रह दिनों तक विशेष उपचार किया गया। तब वे जाकर बलरामजी और सुभद्रा के साथ स्वस्थ हुए।

भगवान श्रीकृष्ण, बलभद्र और सुभद्राजी की बिना-हाथ पांव वाली मूर्तियां इसी कारण ऐसी हैं। उन प्रतिमाओं को ही मंदिर में स्थापित कराया गया। कहते हैं विश्वावसु संभवतः उस जरा बहेलिए का वंशज था जिसने अंजाने में भगवान कृष्ण की हत्या कर दी थी। विश्वावसु शायद कृष्ण के पवित्र अवशेषों की पूजा करता था। ये अवशेष मूर्तियों में छिपाकर रखे गए हैं। विद्यापति और ललिता के वंशज जिन्हें दैत्यपति कहते हैं उनका परिवार ही यहां अब तक पूजा करता है।

भगवान जगन्नाथ की विग्रह मूर्ति के निर्माण की प्रक्रिया भी अनोखी है। जिस वर्ष में आषाढ़ मास में अधिकमास होता है उस वर्ष भगवान की नई प्रतिमा बनाई जाती है। पुरानी प्रतिमा को मंदिर के प्रांगण में ही समाधि दे जाती है। इस प्रक्रिया को नवकलेवरम कहते हैं। मंदिर के पुजारी आंख बंद करके प्रतिमा का निर्माण करते हैं। फिर एक विशेष प्रक्रिया से प्राण प्रतिष्ठा की जाती है।

राजा गाला को लगा कि कोई उसके राज्य में अतिक्रमण करने आया है। वह अपनी सेना लेकर चढ़ आया पर जब दृश्य देखा तो विनीत हो गया। कुओं से निकालकर 108 कलशों में जलभरकर भगवान के शिशुरूप का अभिषेक आरंभ हुआ।

भगवान ने नारदजी को वचन दिया था कि वह एक साधारण बालक की तरह अपनी लीलाएं करके उन्हें आनंदित करेंगे। इसलिए भगवान ने लीला आरंभ की। इतने स्नान से भगवान को सर्दी लग गई। भगवान का पंद्रह दिनों तक विशेष उपचार किया गया। तब वे जाकर बलरामजी और सुभद्रा के साथ स्वस्थ हुए।

भगवान श्रीकृष्ण, बलभद्र और सुभद्राजी की बिना-हाथ पांव वाली मूर्तियां इसी कारण ऐसी हैं। उन प्रतिमाओं को ही मंदिर में स्थापित कराया गया। कहते हैं विश्वावसु संभवतः उस जरा बहेलिए का वंशज था जिसने अंजाने में भगवान कृष्ण की हत्या कर दी थी। विश्वावसु शायद कृष्ण के पवित्र अवशेषों की पूजा करता था। ये अवशेष मूर्तियों में छिपाकर रखे गए हैं। विद्यापति और ललिता के वंशज जिन्हें दैत्यपति कहते हैं उनका परिवार ही यहां अब तक पूजा करता है।

भगवान जगन्नाथ की विग्रह मूर्ति के निर्माण की प्रक्रिया भी अनोखी है। जिस वर्ष में आषाढ़ मास में अधिकमास होता है उस वर्ष भगवान की नई प्रतिमा बनाई जाती है। पुरानी प्रतिमा को मंदिर के प्रांगण में ही समाधि दे जाती है। इस प्रक्रिया को नवकलेवरम कहते हैं। मंदिर के पुजारी आंख बंद करके प्रतिमा का निर्माण करते हैं। फिर एक विशेष प्रक्रिया से प्राण प्रतिष्ठा की जाती है।

जगन्नाथ पूजा विधि

भगवान जगन्नाथ यात्रा पूजा विधि इस प्रकार हैं:-

- पति पत्नी पीले वस्त्र धारण करके भगवान जगन्नाथ की पूजा करें।
- उनको चन्दन लगायें , विभिन्न भोग प्रसाद और तुलसीदल अर्पित करें।
- भगवान जगन्नाथ को मालपुए का भोग लगायें।
- इसके बाद संतान गोपाल मंत्र का जाप करें और संतान प्राप्ति की प्रार्थना करें।
- इसके बाद गजेंद्र मोक्ष का पाठ करें, या गीता के ग्यारहवें अध्याय का पाठ करें।
- एक ही मालपुए के दो हिस्से करें , आधा आधा पति पत्नी खाएं.
- भगवान जगन्नाथ, सुभद्रा और बलभद्र के चित्र या मूर्ति की स्थापना करें।
- उनको फूलों से सजाएँ और उनके समक्ष घी का दीपक जलाएं.
- इसके बाद सभी लोग मिलकर "हरि बोल - हरि बोल" का कीर्तन करें।
- फिर साथ में मिलकर प्रसाद ग्रहण करें।

DOWNLOAD NOW :- PDFSEVA.COM